क्या यीशु परमेश्वर की योजना को जानता था?

...वह परमेश्वर का पुत्र था।

बढ़ई की दुकान पर एक सूचना पट्टी टंगी थी, "काम के लिए दुकान खुली है।" यह एक पारिवारिक व्यवसाय था जिसे पिता चलाया करता था और उसका छोटा लड़का उसका प्रशिक्षणार्थी था। यह दुकान ईमानदारी के लिए मशहूर थी; क्योंकि बढ़ई और उसका पुत्र जो नमूना ग्राहक द्वारा बताया जाता उसे वैसे का वैसा बना दिया करते थे। प्रशिक्षणार्थी अपने आप में विशेष था और उसने कार्य के प्रति पूरी दक्षता दिखाई उसमें महान प्रतिज्ञा के गुण मौजूद थे। उसके लिए एक ही सीमाबद्धता थी कि अभी वह लड़का ही था। जो कुछ भी उसने किया वह सब ठीक ठीक किया; परन्तु अभी भी सीखने के लिए बहुत कुछ बाकी था। इस सीखने वाले लड़के को जिस बात ने मशहूर कर दिया था वह उसकी योग्यता थी कि उसने अपनी सारी ताकत अपने कार्य में लगा दी थी। जब अन्य लोग पाप करने को झुकते प्रतीत हुए तब यह बढ़ई का पुत्र अपने अन्दर व्याप्त इच्छा के कारण सही काम करने में लगा हुआ था।

क्या यह चित्रण मसीह के बाल्यावस्था को निरूपित करता है? क्यों नहीं, मैंने इसलिए इसे लिखा है क्योंकि उसके बाल्यावस्था के बारे में बहुत थोड़ा सा कहा गया है। हम इतना ही जानते हैं: उसकी बाल्यावस्था वास्तविक थी।

जब मसीह मनुष्य बना तो उसने स्वभाविक जीवन की सीमाओं के प्रति स्वयं को सौंप दिया। जब वह एक शिशु था, उसका जीवन ख़तरे में था और उसके माता-पिता को उसको बचाने हेतु दूर देश को भागना पड़ा था। हालांकि वह परमेश्वर का सनातन पुत्र था फिर भी हेरोदेस राजा उसको घात करवा सकता था। परमेश्वर-पुत्र मसीह अनन्तकाल की योजना को निश्चित रूप में जानता था। परन्तु मनुष्य बनने में उसने मनुष्य के समान जीना, बोलना-बताना चुना ताकि वह मानवीयता का अनुभव करे और प्रार्थना में परमेश्वर से बातचीत करे।

जब हम उसके जीवन का अध्ययन करेंगे तो हम परमेश्वर की योजना और उसका पालन करने के अर्थ को और अधिकाई से सीखेंगे।

इस पाठ में आप सीखेंगे...

- मसीह ने अपनी सीमाओं के भीतर सीखा।
- जब मसीह बड़ा हो रहा था तब सीखा।
- मसीह ने तब सीखा जब उसने प्रार्थना की।
- मसीह ने अपने अनुभवों से सीखा।

यह पाठ आपकी सहायता करेगा...

- यह समझाना कि मसीह ने परमेश्वर की योजना को कैसे सीखा और पालन किया।
- उन तरीकों को बताना जिनके द्वारा आप उसके नमूने पर चल सकते हैं।

मसीह ने सीमाओं के भीतर सीखा

विषयवस्तु 1. उन बातों को पहिचानना जिन्हें मसीह ने सीमाबद्धता के अपने अनुभव से सीखा था।

मसीह को अपनी सीमाबद्धता का पूर्ण ज्ञान था। सृष्टि के परमेश्वर (यूहन्ना 1:3) ने स्वयं को उस शरीर से सीमित किया जो स्वयं उसने रचा था। उसने अपनी इच्छा से अपने ईश्वरीय ज्ञान, उपस्थिति तथा सामर्थ को सीमित किया था। उसने अनुभवों के द्वारा सीखने हेतु स्वयं को सौंपा। उसने अपने माता-पिता के प्रति समर्पित होकर बचपन के सीमित दायरों तथा निराशाओं में जीना सीखा। उसका बचपन भी वैसा ही था जैसा कि सामान्य मनुष्य का होता है, इसके अतिरिक्त अन्य आश्चर्यजनक बातों को सोचने का कोई कारण नहीं है। इसमें शक नहीं कि बाल्यावस्था में ही उसका परिचय अनुशासन से कराया गया था। जबकि वह बड़ा होने लगा तब भी वह अपनी सीमाओं से बाहर नहीं गया।

जब वह पिता के तुल्य हुआ और उसमें पिता के सारे गुण मौजूद थे फिर भी उसने आज्ञापालन की सीमा में स्वयं को सम्मिलित पाया (फिलिप्पियों 2:6-8)। उसने वह नहीं किया जो वह चाहता था, परन्तु जो परमेश्वर चाहता था वही किया (यूहन्ना 5:19-30)। उसने अनुभव से सीखा कि मनुष्य भिन्न-भिन्न दबावों से घिरा व दबा हुआ है। स्वाभाविक इच्छाएँ एक बात करने को ज़ोर देती हैं, वहीं पिता की इच्छा कोई दूसरा काम करने की ओर प्रेरित करती है।

उसकी परीक्षा लिए जाने के समय उसने अपने मानवीय जीवन की निर्बलताओं की गहराई को महसूस किया, फिर भी उसे मालूम था कि वह चुनाव के प्रति स्वतन्त्र नहीं कि पत्थरों को रोटी बनाए (लूका 4:1-4)। सृष्टिकर्त्ता के पास हमें बताने के लिए जीवन का अनुभव कैसा अनोखा था।

आपके लिए कार्य

1 मसीह ने अपनी इच्छा से स्वयं को सीमित किया जिससे कि वह हमारे अनुभव के साथ बाँट सके–

(अ) पाप
(ब) असफलता
(स) मानवीयता

जब मसीह बड़ा हो रहा था तब सीखा

विषयवस्तु 2. बाइबल में लिखे वृतान्तों से मसीह के बचपन के लिए परमेश्वर की इच्छा के बारे में निष्कर्षों को पहिचानना।

मसीह ज्ञान और बुद्धि में बड़ा हुआ। बाइबल में उसके जीवन के अनेक विशेष क्षेत्रों का वर्णन है जो उसके जीवन में हुए थे।

लूका 2:40 में उसके बचपन में बड़े होने का वर्णन किया गया है। यह इस बात का सटीक प्रमाण है कि परमेश्वर का हाथ उस पर था, क्योंकि बाइबल बताती है कि बालकपन से ही वह बुद्धि से परिपूर्ण था। फिर भी, उसने तब तक कोई आश्चर्यकर्म करके नहीं दिखाया जब तक कि उसने गलील में अपनी सेवा का आरंभ न किया (यूहन्ना 2:11)।

जब वह अभी बारह वर्ष का ही था, उसके माता-पिता उसे मन्दिर में फसह का पर्व मनाने के लिए ले गए (लूका 2:41-42)। यहूदी समाज के अनुसार वह उस आयु तक पहुँच रहा था जबकि उसे धार्मिक मामलों के लिए बालिग़ (व्यस्क) माना जा सकता था। फिर भी उसके लिए अभी भी अपने माता-पिता के अधीन रहना आवश्यक था।

शायद इस समय यीशु एक प्रकार की जाँच को महसूस कर रहा था जैसा कि हम भी बड़े होते समय अनुभव किया करते हैं। यह प्रश्न अक्सर हमारे मन में उठता है : व्यक्ति के जीवन में वह समय कब आता है जबकि वह अपने जीवन का लक्ष्य निर्धारित करे और अपने निर्णयों के प्रति उत्तरदायित्व को ग्रहण करे?

मसीह के जीवन में आत्मिक विकास के प्रति जागरुकता होना चाहिए थी अथवा मसीह के जीवन में परमेश्वर के प्रति विवेकशीलता। एक बात तो स्पष्ट है : इसने उसके जीवन में तनाव पैदा किया। उसने अपने आप में मन्दिर में ठहरे रहने का आकर्षण महसूस किया, फिर भी अपने माता-पिता के मार्गदर्शन के प्रति कर्त्तव्यशील रहकर (लूका 2:43-51)।

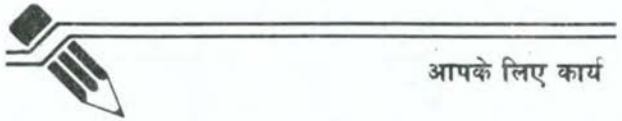

आपके लिए कार्य

2 लूका 2:41-51 पढ़िए। उस समय के अपने व्यवहार से यीशु यह दर्शाता है कि वह—

(अ) अपने निर्णय स्वयं ही ले सकता था क्योंकि उस पर किसी व्यक्ति का अधिकार नहीं था।

(ब) अपने माता-पिता के अधिकार में सीमित था फिर भी परमेश्वर की सेवा पूर्ण रूप से कर सकता था।

(स) अपने माता-पिता की सलाह और अगुवाई पाने के लिए बाध्य नहीं था।

यह दिलचस्प बात है कि लूका 2:40 में हम पढ़ते हैं कि मसीह बुद्धि से परिपूर्ण था तथा लूका 2:52 में वह बुद्धि और डीलडौल में बड़ा हुआ। इससे यह प्रतीत होता है कि बुद्धि एक वरदान है फिर भी व्यक्ति की परिपक्वता और विकास से जुड़ी हुई है। मसीह के बालक होने के नाते भी उसमें बुद्धि का समावेश हुआ। वह उसके मानसिक तथा आत्मिक विकास के लिए भी आवश्यक थी।

इसमें कोई शंका नहीं कि उस समय मसीह ने अपने लिए परमेश्वर की योजना को जाना और सीखा। जब उसने अपने पुत्रत्व को समझा, तब उसने पाया कि उसका सही स्थान मन्दिर में है। तथापि, उसके लिए परमेश्वर की इच्छा में मरियम और यूसुफ और इन तमाम वर्षों में उनका अनुशासन और शिक्षाएँ भी सम्मिलित की गई थीं। बारह वर्ष की आयु में उसने अपनी सेवा का सम्पूर्ण चित्र तो नहीं देखा था, परन्तु अपनी बारह वर्ष की अवस्था के अनुकूल जो वह जानता था उसकी प्रतिक्रिया प्रकट की। सच्चाई तो यह थी कि मसीह के लिए परमेश्वर ने अपना प्रशिक्षण पूरा नहीं किया था, न ही मसीह अभी अपनी सेवा के लिए तैयार ही था।

जैसा कि हम सच्चाइयों के द्वारा समझ में बढ़ते जाते हैं इसी प्रकार मसीह भी बढ़ता गया।

आपके लिए कार्य

3 परमेश्वर की इच्छा के निष्कर्ष (सारांश) को जिसे हम यीशु की बाल्यावस्था के बारे में दिए गए बाइबल के

विवरण—लूका 2:41-52 में देख सकते हैं—उस अक्षर पर गोला बनाएँ जिसमें परमेश्वर की इच्छा का सारांश पाया जाता है।

(अ) जो व्यक्ति अपने लिए परमेश्वर की इच्छा का खोजी है उसे अभी भी उसकी समझ में बढ़ने की आवश्यकता है।

(ब) व्यक्ति एक ही समय में परमेश्वर की इच्छा का पालन और सीमाओं में बंधा नहीं रह सकता।

(स) अंपनी इच्छा के बारे में परमेश्वर जो बुद्धि प्रदान करता है वह विकास या परिपक्वता से सम्बन्धित नहीं होती।

मसीह ने प्रार्थना करने के द्वारा सीखा

विषयवस्तु 3. उन शिक्षाओं का वर्णन करना जिन्हें आपने प्रार्थना के द्वारा सीखा, वे उसी प्रकार की हैं जैसा कि मसीह ने सीखा था।

मसीह ने न केवल तब सीखा जब वह बढ़ रहा था किन्तु उसने तब भी सीखा जब उसने प्रार्थना की। जैसा कि पिता से सम्बन्ध स्थापित करने हेतु हम प्रार्थना करते हें, वैसे ही यीशु मसीह प्रार्थना में पिता से निकट सम्बन्ध बनाए रखता था। जब कि बाइबल में उसके युवावस्था में प्रार्थना की आदत (तीस वर्ष की आयु तक का) का वर्णन नहीं किया गया, फिर भी यह बिलकुल स्पष्ट है कि उसने अपने प्रार्थना के जीवन को अपनी तीन वर्षीय सेवाकाल में एक आदत बना लिया था। उसने प्रार्थना के जीवन का विकास पहिले ही कर लिया था। प्रार्थना के द्वारा उसने परमेश्वर की योजना के विषय में क्या सीखा?

अनुशासन

मसीह ने प्रार्थना के अनुशासन के प्रति स्वयं को समर्पित किया था। प्रार्थना एक सरल अनुभव नहीं है; यह शरीर की अभिलाषाओं से जब-तब सहायता पाती है। सच तो यह है कि आत्मिक विजय जो आत्मा की वेदना से प्राप्त होती है, वह अक्सर हमारी देह में दुःख उठाने के मूल्य से जीती जाती है। हमारे शरीर इस तरह के मल्लयुद्ध और संघर्ष में भाग लेने से स्वयं को दूर रखने के प्रति प्रयत्नशील रहते हैं।

गतसमनी के बाग में यह सिद्धान्त मसीह की प्रार्थना के अनुभव में स्पष्ट रीति से प्रकट हुआ है। वहाँ हम मसीह को उसकी आत्मिक अर्न्तदृष्टि की परवाह किए बिना एक ऐसे शक्तिशाली संघर्ष के बीच पाते हैं कि पिता की न बदलने वाली इच्छा के प्रति वह क्या करे। उसने कहा, "हे मेरे पिता, यदि हो सके, तो यह दुःख रूपी कटोरा मुझ से टल जाए" (मत्ती 26:39)। उसकी पुकार ऐसी थी जैसे एक मनुष्य परमेश्वर के मार्ग को सीख रहा हो। उस तनाव के बीच, प्रार्थना की वेदना, उसके मानवीय शरीर की वेदना को प्रकट कर रही थी और उसका पसीना मानो लहू की बड़ी बड़ी बूँदों की नाईं भूमि पर गिर रहा था (लूका 22:44)।

आपके लिए कार्य

4 मत्ती 26:40-41 पढ़िए। शिष्य प्रार्थना नहीं कर रहे थे क्योंकि–

(अ) उन्हें निश्चय नहीं था कि प्रार्थना कैसे करना चाहिए।

(ब) उस समय उनके मन में प्रार्थना करने की इच्छा नहीं थी।

(स) उन्होंने शरीर की अभिलाषाओं पर मन लगाया और उन्हीं के वश में हो गए थे।

मानवीय देह सदा ही भौतिक सुख की खोज में रहती है। इसकी इच्छाए किसी को भी प्रार्थना करने, निवेदन और विनती करने के लिए अगुवाई प्रदान नहीं करेगी। मसीह ने इस सच्चाई को भलीभांति सीख लिया था, हालांकि उसका सिद्ध मानवीय स्वभाव था, और वह उस शाप से बिना दाग़, निर्दोष था जो आदम के पाप के कारण आया था।

निर्भरता

मसीह ने प्रार्थना में पिता पर निर्भर रहना सीखा। उसकी सेवकाई की प्रत्येक नई दिशा प्रार्थना में बिताए उसके लम्बे समय में उसे पहिले से प्राप्त हो जाती थी। जब उसे अपने बारह शिष्यों को चुनना था तो उसने पूरी रात प्रार्थना में बिताई थी। हालाँकि उसकी प्रार्थना के शब्द लिखे नहीं गए, फिर भी हम देखते हैं कि अगले दिन उसे इतना आत्मविश्वास था कि जिन बारह शिष्यों को उसने चुना था उन्हें नाम लेकर अपने पास बुलाया (लूका 6:12-16)।

हम यीशु की उस समय की प्रार्थना को सुन सकते हैं जो उसने मृत्यु और दुःख उठाने के पूर्व की थी। (यूहन्ना 17)। इस प्रार्थना में हम देखते हैं कि पिता से उसके व्यक्तिगत और प्रगाढ़ सम्बन्ध थे। उसकी प्रार्थना इतनी वास्तविक, इतनी व्यक्तिगत थी कि हम ऐसा महसूस कर सकते हैं कि पिता वहाँ मौजूद था। मसीह ने पिता को अपने सम्बन्ध (रिश्ते) का स्मरण दिलाया और यह भी कि जिन्हें पिता ने उसे दिया था उन पर उसने भरोसा किया। यह पूर्ण निर्भरता की प्रार्थना थी।

प्रभावकारी बातचीत

मसीह ने यह भी सीखा कि प्रार्थना परमेश्वर से बातचीत का एक पूर्ण प्रभावकारी और उत्तम तरीका है। जब उसने प्रार्थना की तो कार्य सम्पन्न हो गए। जब उसे जल में बपतिस्मा लेना था तो उसने प्रार्थना की और पवित्र आत्मा कपोत की नाईं उस पर उतरा (लूका 3:21-22)

उसने शिष्यों को, उनके प्रार्थना रहित जीवन के लिए झिड़का जब वे एक लड़के में से दुष्टआत्मा नहीं निकाल सके थे जिसने उस लड़के को बहुत सताया था (मरकुस 9:19, 28-29)। उसने कहा, कि विजय प्रार्थना के कारण ही मिली। उसकी सामर्थ उसकी प्रार्थनाओं द्वारा जाँची गई और प्रमाणित हुई।

उसने लाज़र को मृतकों में से जीवित करने हेतु प्रार्थना की (यूहन्ना 11:38-44)। उसने प्रार्थना में निरन्तर लगे रहकर पिता से सामर्थ्य और निर्देश प्राप्त किए। उसने सीखा कि परमेश्वर से बात करने हेतु प्रार्थना वास्तव में प्रभावकारी और पर्याप्त माध्यम है।

आपके लिए कार्य

5 हमने ऐसी तीन बातों का अध्ययन किया है जो मसीह ने प्रार्थना के द्वारा सीखी थीं। उन बातों पर विचार कीजिए जो आपने प्रार्थना के द्वारा सीखी हैं। अपनी नोटबुक में ऐसे अनुभवों का एक संक्षिप्त विवरण लिखिए अथवा उन क्षेत्रों के विषय, जिनमें आपको सीखने की आवश्यकता है:

(अ) अनुशासन
(ब) निर्भरता
(स) प्रभावकारी संसर्ग (बातचीत)

मसीह ने अपने अनुभव से सीखा

विषयवस्तु 4. उन विवरणों को चुनना जिनमें बताया गया है कि मसीह ने अनुभव के द्वारा क्या सीखा।

मसीह ने अनुभव के द्वारा सीखा। विभिन्न तरह का ज्ञान है जो एक व्यक्ति के कुछ अनुभव से प्रकट होता है। कभी-कभी ऐसा होता है कि व्यक्ति अपने ज्ञान से परे कुछ कर बैठता है तब उसे एक नए तरह का अनुभव होता है जो अलगाव का प्रतीक है।

परमेश्वर की पवित्रता अलगाव से चित्रित की गई है। परमेश्वर का पुत्र होने के नाते मसीह स्वयं को पापियों से जोड़ने नहीं आया था पर वह तो मनुष्यों से सम्पर्क साधने के लिए आया था। उसका उद्देश्य मनुष्य के अनुभवों को बाँटना था पर ठीक ऐसा करते हुए उसे अपनी पवित्रता को भी बनाए रखना था।

मनुष्य बनने के द्वारा मसीह क्या सीख सका जो वह पहिले नहीं जानता था?

परीक्षा पर विजय पाना

मसीह ने अपनी परीक्षा लिए जाने के अनुभव से सीखा। परीक्षा कोई ऐसी वस्तु नहीं थी जिसे उसने देखा था। यह तो वह सामर्थ थी जो उसने महसूस की थी जो कुछ भी करवा सकती थी। जंगल में उसकी परीक्षा लिए जाने के अनुभव का अनुसरण कीजिए (लूका 4:1-13)।

वह आत्मा के द्वारा जंगल में ले जाया गया और चालीस दिन तक उसने न कुछ खाया न पीया। चालीस दिन के दौरान उसने भिन्न-भिन्न परीक्षाओं का सामना किया जो शैतान ने उस पर डाली थीं। चालीस दिन के पश्चात उसने तीन बड़ी परीक्षाओं का सामना किया जिनका वर्णन बाइबल में किया गया है (शायद ये उसकी पहली और अन्तिम परीक्षाएँ थीं)। वह भूखा, थका हुआ

और शरीर में निर्बल था। वह अपनी मानवीय सीमाओं को महसूस कर रहा था। जिन कार्यों के लिए उसकी परीक्षा ली गई थी वे कार्य पूरी रीति से ग़लत नहीं थे, विशेषकर पत्थरों को राटी बनाने का कार्य।

अनन्तकाल के लिए संसार की सम्पूर्ण आशा मसीह की इस योग्यता पर निर्भर थी कि मसीह भूखा, थकावट, निर्बलता अथवा किसी भी परिस्थिति के बावजूद पिता परमेश्वर की इच्छा को जाने और उसकी इच्छा को पूरा करे। इस प्रकार का विरोध ही परीक्षा का अनुभव है।

उसकी विजय की तुलना अन्यों की असफलता से कीजिए। एसाव दिन भर शिकार की थकान से खाली हाथ लौटा था और उसी समय याकूब दाल पका रहा था। एसाव से न रहा गया और उसने याकूब से खाने के लिए दाल मांगी (उत्पत्ति 25:27-34) और अपने पहलौठे का अधिकार खो दिया। इस्राएलियों की सारी मण्डली को मिस्र की गुलामी से निकलकर जंगल में चलते हुए अभी ज्यादा दिन नहीं हुए थे कि भोजन के कारण कुड़कुड़ाने लगे और मात्र अपने पसन्द का भोजन पाने हेतु वे मिस्र को वापस लौटना चाहते थे (निर्गमन 16:1-3)।

यीशु ने अनुभव से सीखा। उसने स्वभाविक (प्रकृतिक) देह (शरीर) और मस्तिष्क की कमज़ोरी व चचलता को सीखा। उसने वचन की सामर्थ की पर्याप्तता को भी सीखा जो परीक्षा का सामना करने में समर्थ है। निर्बलताओं के प्रति उसमें धीरज था परन्तु वह पाप को सहन नहीं कर सकता था (इब्रानियों 4:15)।

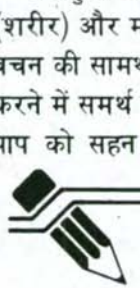

आपके लिए कार्य

6 मसीह का परीक्षा का अनुभव हमें दर्शाता है कि—

(अ) परीक्षाएँ ठीक उस समय हमारे ऊपर आती हैं जब हम उन पर विजय पाने के लिए बहुत ही कमज़ोर होते हैं।

(ब) हम परमेश्वर के वचन के उपयोग के द्वारा परीक्षा पर विजय पा सकते हैं।

(स) परीक्षा पर विजय पाना उस समय भी संभव है जब हम निर्बल और थक गए हैं।

आज्ञापालन

मसीह ने अपने दुःख उठाने के द्वारा आज्ञापालन सीखा। स्वर्ग में पुत्र के लिए एक बात करने के लिए है अर्थात् स्वयं को पिता के प्रति समर्पित करना। पृथ्वी पर मनुष्य के लिए आवश्यक है कि वह आज्ञाकारी बनें। मनुष्य की आज्ञाकारिता परमेश्वर के प्रति समर्पण है—जब इस संसार व शैतान की समस्त शक्तियाँ, तमाम परिस्थितियाँ, मनुष्य के विपरीत हों तब ही परमेश्वर के लिए मनुष्य का समर्पण सही आज्ञापालन है।

इस प्रकार का आज्ञापालन दुःख उठाने से ही सीखा जाता है। (इब्रानियों 5:8)। और कोई दूसरा मार्ग या उपाय नहीं है।

सर्वसामर्थी के लिए विरोध का अर्थ क्या हो सकता था? जीवन देने वाले के लिए मृत्यु का क्या अर्थ हो सकता था? चंगा करने वाले यहोवा के लिए दुःख-दर्द का क्या अर्थ हो सकता था? उस अनन्त स्रोत वाले के लिए आवश्यकता का क्या अर्थ हो सकता था? क्या कोई व्यक्ति नाप सकता है कि यदि समुद्र में से एक कप पानी ले लिया जाए तो क्या समुद्र पर कोई असर पड़ेगा?

परन्तु मसीह के लिए जो देहधारण करके मनुष्य बना—स्वयं में सीमितताओं का अनोखा अनुभव था। इस तरीके से उसने मनुष्य बनकर परमेश्वर के आज्ञापालन को सीखा था।

आपके लिए कार्य

7 अपने दुःख भोगने के अनुभव से मसीह ने आज्ञापालन सीखा क्योंकि–

(अ) उसे दुःख भोगने का इससे पूर्व कुछ भी ज्ञान नहीं था।

(ब) उसने मनुष्य बनकर परमेश्वर की इच्छा पूरी की, स्वर्ग में परमेश्वर का पुत्र होकर नहीं।

(स) मनुष्य बनने के पूर्व वह पिता की इच्छा के अधीन नहीं था।

8 हमने ऐसे कई तरीकों का अध्ययन किया है जिनमें मसीह ने अपने लिए परमेश्वर की रूपरेखा को सीखा और उसका अनुसरण किया। प्रत्येक वाक्य को पढ़ें जिनमें इन तरीकों में से किसी एक का वर्णन किया गया है। तब अपनी नोटबुक में नीचे दिए गए वाक्यों को इस रूप में पूरा करें जिनमें यह बताया गया है कि किस प्रकार आप उसके नमूने को अपने जीवन में लागू कर सकते हैं।

(अ) मसीह ने अपनी मानवीय सीमाओं में बन्धे रहकर भी परमेश्वर की सिद्ध इच्छा को पूर्ण किया। मैं भी अपनी सीमाओं में रहकर जो मेरे अनुभवों का हिस्सा है, परमेश्वर की इच्छा पूरी कर सकता हूँ: ....(अपनी नोटबुक में इसे पूरा करें)।

(ब) मसीह ने प्रार्थना के अनुशासन में रहकर परमेश्वर की इच्छा को सीखा था। मैं प्रार्थना के अनुशासन के द्वारा परमेश्वर की इच्छा जान सकता हूँ: ... (इसे पूरा करें)।

(स) मसीह ने परीक्षा, भूख, थकावट, दर्द अथवा दुःख सहने के बावजूद परमेश्वर की इच्छा का पालन किया। मैं इस प्रकार की परीक्षा, भूख, थकावट, दर्द, या दुःख उठाने के द्वारा परमेश्वर की इच्छा का पालन कर सकता हूँ: ... (पूरा करें)।

पृथ्वी पर आने से पूर्व मसीह परमेश्वर का पुत्र था। पृथ्वी पर आने से पूर्व वह सब कुछ जानता था परन्तु स्वर्ग पर वापस जाते समय वह एक भिन्न प्रकार का ज्ञान लेकर गया। वह स्वर्ग पर हमारा महायाजक बनकर गया कि पिता के समक्ष हमारा प्रतिनिधित्व करे (इब्रानियों 12:2)।

क्या ही उत्साहजनक एवं प्रेरणादायक है यह! कैसा अनूठा उदाहरण! मसीह हमसे पहले गया। उसने अपने लिए परमेश्वर की रूपरेखा (योजना) को सीखा। वह विजयी है।

अपने उत्तरों को जांच लें

5 आपके उत्तर। क्या आप मसीह के प्रार्थनामय जीवन में कुछ सिद्धान्तों को पाते हैं जिन्हें आप परमेश्वर की रूपरेखा जानने व उस पर चलने के लिए अपने ऊपर लागू कर सकते हैं?

1 (स) मानवीयता।

6 (स) हम परमेश्वर के वचन को इस्तेमाल करने के द्वारा परीक्षा पर विजय पा सकते हैं।

(द) चाहे हम निर्बल या थके हारे क्यों न हों यह संभव है कि हम परीक्षा पर जयवन्त हो सकते हैं।

2 (ब) अपने माता-पिता के अधिकार की सीमा में था फिर भी परमेश्वर की सेवा कर सकता था।

7 (ब) मनुष्य होकर परमेश्वर की इच्छा पूरी की, न कि स्वर्ग में परमेश्वर का पुत्र होकर।

3 (अ) जो व्यक्ति अपने लिए परमेश्वर की इच्छा जानना चाहता है उसे उसकी समझ में बढ़ने की अभी भी आवश्यकता है।

8 आपके उत्तर। मुझे आशा है कि आप ऐसे कई तरीकों को जान सके हैं जिनमें आप मसीह का नमूना अपने जीवन के लिए ले सकते हैं।

4 (स) अपनी दैहिक अभिलाषाओं (शारीरिक इच्छाओं) को अपने ऊपर शासन करने दिया।